CHETANA
International Journal of Education

Impact Factor
SJIF=5.689

Peer Reviewed/
Refereed Journal

ISSN-Print-2231-3613
Online-2455-8729

Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

Received on 10th April 2021, Revised on 15th April 2021, Accepted 17th April 2021

आलेख

जम्मू-कश्मीर का प्रश्न और बाबा साहेब डॉ. भीमराव आम्बेड़कर

* प्रो. बलवान गौतम
चन्दन आनन्द
शोध छात्र, डॉ. आम्बेडकर पीठ
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय ,धर्मशाला)
Email.id-bs.20aug@gmail.com, Mob-9971327848

मुख्य शब्द– जम्मू-कश्मीर पुर्नगठन विधेयक, भारतीय संसद, अनुच्छेद *370* एवं *35A आदि।*

सार संक्षेप

5 अगस्त *2019* को भारतीय संसद द्वारा जम्मू-कश्मीर पुर्नगठन विधेयक पारित होने के साथ ही भारतीय संघ में जन्मू-कश्मीर की विशेष स्थिति समाप्त हो गई है। केन्द्र सरकार ने संविधान में वर्णित सभी प्रावधानों को उस राज्य में लागू कर दिया है और साथ ही उसको दो संघीय क्षेत्रों *(union Territories)* जम्मू-कश्मीर और लद्दाख में विभाजित कर दिया है। यद्यपि *5* अगस्त *2019* का दिन भारत के स्वर्णिम इतिहास में दर्ज हो गया है, फिर भी भारत के इतिहास के उन काले दिनों को भी याद रखना अत्यन्त आवश्यक है, जो भारतीय संविधान में शामिल अस्थायी अनुच्छेद *370* एवं *35A* के कारण भारत राष्ट्र को सहने पड़े। अतः भारत का इतिहास सदैव उन नायकों से जवाब माँगता रहेगा, जो जम्मू-कश्मीर के उस काले दिनों के लिए जिम्मेदार रहे हैं। प्रस्तुत लेख जम्मू-कश्मीर के प्रश्न को लेकर बाबा साहेब डॉ. भीम राव आम्बेड़कर की इसी प्रकार की चिन्ताओं की आलोचनात्मक प्रस्तुति है।

प्रस्तावना

साधारण परिस्थितियों में 26 अक्टूबर 1947 को जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह द्वारा रियासत को वैधानिक तरीके से भारत की नई सवैंधानिक व्यवस्था में शामिल किए जाने के पश्चात् जम्मू-कश्मीर का प्रश्न समाप्त हो जाना चाहिए था, किन्तु जम्मू-कश्मीर की भू-सामरिक-स्थिति, ब्रिटिश साम्राज्य-वादी कूटनीति, रियासत को लेकर लार्ड माउटबेटन की रणनीति, जवाहर लाल नेहरू के माँउटबेटन से पारिवारिक सम्बन्ध एंव महाराजा हरिसिंह का भारत की ओर आडिग झुकाव ऐसे विषय हैं, जिनके कारण जम्मू-कश्मीर की रियासत आज भी 1947के भारत विभाजन की त्रासदी का दंष झेल रही है।

1947 में ब्रिटिश सरकार की इस घोषणा के पश्चात् कि वे भारत छोड़कर चले जाएंगे और भारत दो अधिराज्यों में बँट जाएगा, भू-सामरिक कारणों से जम्मू-कश्मीर रियासत का महत्व बढ़ गया था। रियासत की सीमा भारत और पाकिस्तान दोनों ही देशों से लगती थी। यद्यपि 12 अगस्त 1947 को जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने उस समय भारत और पाकिस्तान दोनों देशों के साथ यथास्थिति कायम रखने के लिए समझौता किया। तथापि तत्कालीन परिस्थितियों में महाराजा हरिसिंह के लिए किसी एक देश के साथ अधिमिलन करना अत्याधिक कठिन था। जम्मू-कश्मीर एक मुस्लिम बहुल रियासत थी और भारत पाक विभाजन धर्म के आधार पर हुआ था। जहाँ जम्मू-कश्मीर रियासत का व्यापार वाणिज्य, शिक्षा एवं अन्य सुविधाओं का केन्द्र लाहौर था, वहाँ दूसरी ओर नई दिल्ली एवं श्रीनगर के बीच सीधी सड़क सेवा भी उपलब्ध नहीं थी। ऐसी स्थिति में महाराजा हरिसिंह द्वारा जल्दबाजी में अधिमिलन के बारे में लिया गया कोई भी निर्णय आत्मघाती हो सकता था।

वैसे भी जम्मू-कश्मीर की रियासत को लेकर पाकिस्तान भलि-भाँति समझ गया था कि रियासत के महाराजा हर हालत में भारत में शामिल होगें। इस स्थिति को भाँपते हुए पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर पर जबरन कब्जा करने का प्रयास किया और पाकिस्तानी सेना ने कबालियों के रूप में 22 अक्टूबर 1947 को जम्मू-कश्मीर पर हमला कर दिया।

दूसरी तरफ जवाहर लाल नेहरू महाराजा हरिसिंह से जम्मू-कश्मीर रियासत के विलय पर बातचीत करने के लिए तैयार ही नहीं थे। वे विलय की बातचीत शेख मोहम्मद अब्दुल्ला से ही कराना चाहते थे, लेकिन यह तभी सम्भव हो सकता था, जब रियासत की सवैंधानिक स्थिति में परिवर्तन हो जाता और सत्ता शेख अब्दुल्ला के हाथों में आ जाती। शेख अब्दुल्ला 1946 में 'दोगरों गद्दी छोड़ो' के आन्दोलन के चलते तीन वर्ष की कैद काट रहे थे। उन सवेंदनशील दिनों में नेहरू शेख अब्दुल्ला को जेल से छुड़वाकर उसे रियासत की गद्दी पर बिठा देने के राजशाही अभियान में लगे हुए थे। महाराजा हरिसिंह के शब्दों में "प्रधानमंत्री नेहरू शेख अब्दुल्ला को जेल से मुक्त कराने के लिए ज्यादा ही चिन्तित थे"[1i] जवाहर लाल नेहरू के ही शब्दों में 'विभाजन से पूर्व ही जब अधिकांश रियासतें भारत की सवैंधानिक व्यवस्था में विलीन हो रही थी, तब हमनें जम्मू-कश्मीर रियासत के अधिनियम को प्रोत्साहित नहीं किया। हमने सुझाव दिया था कि इस विषय पर बाद में, जब किसी भी तरीके से लोगों की राय जान ली जाएगी, तभी विचार किया जाएगा। लोगों की राय जानने के बारे में भी हमारा सुझाव था कि रियासत में सविंधान सभा का गठन किया जाएगा जिसके माध्यम से अधिमिलन व अन्य विषयों पर लोगों की राय सुनिश्चित की जाएगी।[ii] क्रिस्टोफर थामस ने भी पुस्तक में लिखा है कि विभाजन से एक माह पूर्व महाराजा ने अपने प्रधानमंत्री पंडित रामचन्द्र काक को रियासत के विलय की शर्तों पर बातचीत करने के लिए दिल्ली भेजा लेकिन दिल्ली में पंडित काक को स्पष्ट बता दिया गया कि लोगों की इच्छा जाने बिना विलय का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया जाएगा।[iii] इस प्रकार जम्मू-कश्मीर के विलय को लेकर महाराजा हरिसिंह जब अपना प्रस्ताव दिल्ली भेजते तो वहाँ से एक ही जवाब मिलता कि शेख अब्दुल्ला को सत्ता सौंप दो। जवाहर लाल नेहरू की इस दीर्घकालीन योजना के चलते ही महाराजा हरिसिंह पर यह आरोप लगाया जाता है कि वे 15 अगस्त 1947 से पूर्व भारत की सवैंधानिक व्यव्स्था में शामिल क्यों नहीं हुए?

अन्तत; जम्मू-कश्मीर रियासत और देश के हित में स्वंम बलिदान करते हुए महाराजा हरिसिंह ने 26 अक्टूबर 1947 को जम्मू-कश्मीर रियासत का पूर्ण एवं विधिवत विलय भारत में किया और जवाहर लाल नेहरू की जिद को मानते हुए शेख अब्दुल्ला को जम्मू-कश्मीर का प्रधानमंत्री बनाया। विलय के तुरन्त बाद पाकिस्तानी घुसपैठियों को बाहर निकालने के लिए केन्द्र सरकार ने भारतीय सेना को जम्मू-कश्मीर जाने के निर्देश दिए। जम्मू-कश्मीर में सेना को भेजने के निर्णय पर सरदार पटेल की भूमिका पर एस. गोपाल अपनी पुस्तक 'जवाहर लाल नेहरू की आत्म कथा' में लिखते है कि लगभग सारा मंत्रिमंडल अनिर्णय की स्थिति में था और वह सरदार पटेल ही थे, जिन्होंने सेनाध्यक्ष तथा अन्य लोगों की इच्छा विरूद्ध श्रीनगर में सेना भेजने का निर्णय लिया।[iv] इतना ही नहीं, जब भारतीय सेना पाकिस्तानी घुसपैठियों को जम्मू-कश्मीर

से बाहर निकालने को पूरी तरह तत्पर थी और पूरे जम्मू-कश्मीर राज्य को पाकिस्तानी कबालियों से मुक्त कराने के करीब ही थे कि जवाहर लाल नेहरू ने लार्ड माउंटबेटन के दबाव में आकर युद्ध विराम की घोषणा कर सेना को वापस बुला लिया और अकेले जवाहर लाल नेहरू ने संयुक्त राष्ट्र संघ में जाने का निर्णय लिया। इसके लिए उन्होंने किसी भी भारतीय नेता को विश्वास में नहीं लिया था। एस.के.पाटिल अपनी पुस्तक में लिखते है "कश्मीर का मसला सरदार पटेल के भरोसे छोड़ा जाता तो वे कभी-भी संयुक्त राष्ट्र संघ में जाने के प्रस्ताव को नहीं मानते। भारत लाभ की स्थिति में था। किन्तु जवाहर लाल ने माँउटबेटन की सलाह अधिक सुनी। सरदार पटेल अत्यन्त दुखी थे किन्तु कुछ कर न सके।[v] वस्तुत: जवाहर लाल नेहरू जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध में दो बाते महत्वपूर्ण है: पहला, शेख अब्दुल्ला को पंथ निरपेक्ष मानना एवं उन पर अत्याधिक विश्वास करना, दूसरा माँउटबेटन परिवार के साथ उनकी पारिवारिक मित्रता, जिन्होंने उनके निर्णयों को बहुत अधिक प्रभावित किया। जिसके चलते पूरा जम्मू-कश्मीर ही खतरे में पड़ गया था। इस पृष्ठभूमि में बाबा साहेब डॉ. भीम राव अम्बेडकर के कश्मीर नीति सम्बन्धी विचार महत्वपूर्ण हैं।

जम्मू-कश्मीर के प्रश्नका दर्दनाक एवं आश्चर्यजनक पहलू 1930 में ब्रिटिश सरकार द्वारा लदंन में आयोजित प्रथम गोलमेज सम्मेलन हैं, जिसका जम्मू-कश्मीर के राजनीतिक इतिहास में अहम स्थान है। इस सम्मेलन में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय राजाओं के मंडल के प्रतिनिधि के तौर पर महाराजा हरिसिंह ने भाग लिया। डॉ.भीमराव आम्बेडकर भी गोलमेज सम्मेलन में शामिल हुए थे। ब्रिटिश सरकार की आशा के विपरित काग्रेंस पार्टी ने इस सम्मेलन का बहिष्कार किया। इस सम्मेलन के माध्यम से ब्रिटिश सरकार भारतीय राजाओं को देश के राष्ट्रीय आन्दोलन के खिलाफ एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करना चाहती थी, साथ ही दुनिया के देशोंको यह संदेश भी देना चाहती थी कि भारतीय राजे-महाराजे ही अपने देश की आजादी का विरोध रह रहे हैं। दरअसल ब्रिटिश सरकार में भारतीय मामलों के मंत्री सर सैम्युल ने सम्मेलन में भाग लेते हुए भारत की स्वतन्त्रता की माँग का पुरजोर विरोध किया और इस विरोध के लिए एक अजीबोगरीब तर्क दिया कि इंग्लैड की सरकार ने भारतीय राजाओं को यह वचन दिया है कि साम्राज्ञी की सरकार हर हालत में उनकी सत्ता की रक्षा करेगी। सम्मेलन में भारतीय राजाओं के मडंल के प्रतिनिधि महाराजा हरिसिंह ने सैम्युल होरे की यह तकरीर सुनी तो वे सारे षडयंत्र को समझ गए। उन्होंने उठकर सैम्युल होरे को उत्तर देते हुए कहा कि ब्रिटिश सरकार का मित्र होने के नाते हम आपके साथ है लेकिन भारतीय होने के नाते हम अपनी मातृभूमि, जिसने हमें जन्म दिया और हमारा पालन पोषण किया, के प्रति निष्ठावान हैं। हम अपने समस्त देश -वासियों के साथ ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में अपने देश की सम्मानजनक एंव समान स्थिति की माँग के पक्ष में मजबूती से खड़े है।[vi] इस सम्मेलन में ब्रिटिश भारत एंव देशी रियासतों का एक संघ बनाने को लेकर भी विमर्श हुआ। इसी चर्चा पर 15 जनवरी 1931 को बोलते हुए महाराजा हरिसिंह ने कहा कि हमारी मातृभूमि निराशाजनक तरीके से दो अलग राजनीतिक व्यवस्थाओं में विभक्त हैं। दोनों इकाईयाँ एक दूसरे से अलग रहकर काम करती हैं। प्रस्तावित फेड़रेशन से हमारे देश की एकता सुनिश्चित हो जाएगी।[vii] महाराजा हरिसिंह के इन दो भाषणों से जहाँ एक ओर देशभर में खुशी की लहर दौड़ गई, वहाँ दूसरी ओर उनके भाषणों ने ब्रिटिश षडयंत्रों को ओर तेज कर दिया। इस प्रकार प्रथम गोलमेज सम्मेलन में महाराजा हरिसिंह की भूमिका ने ब्रिटिश सरकार को चौकन्ना कर दिया।

शेख मोहम्मद अब्दुल्ला, जो अप्रैल 1930 में अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी से अपनी पढ़ाई पूरी करके वापस श्रीनगर पहुँचे थे। उनके तीन अन्य साथी थे: मोहम्मद राजब काजी-सैफुद्दीनकारी और गुलाम अहमद मुख्तार। इन सभी ने अपने कुछ अन्य साथियों के साथ मिलकर मुसलमानों को महाराजा के खिलाफ संगठित करने के उद्देश्य से रीडिंग रूप् पार्टी का गठन किया। जिसने महाराजा हरिसिंह विरोधी गतिविधियों में तेजी आने लगीं और धीरे-धीरे शेख अब्दुल्ला उनके केन्द्र बिन्दु बनने लगे। ऐसा माना जाता है कि शेख अब्दुल्ला और उसकी रीडिंग रूम पार्टी द्वारा चलाया जाने वाला यह आन्दोलन परोक्ष रूप् से दूरगामी ब्रिटिश नीति का ही अंग था। कांग्रेस की घोषित नीति भारतीय रियासतों के मामलों में दखल देने की नहीं थी, फिर भी नेहरू इस नीति को दर किनार करके जम्मू-कश्मीर में शेख अब्दुल्ला के आन्दोलन जुड़ गए थे। डॉ. आम्बेडकर इस आन्दोलन की प्रकृति को अच्छी तरह पहचान गए थे और इससे बिल्कुल भी सहमत नहीं थे। बाबा साहेब अपनी पुस्तक 'पाकिस्तान अथवा

भारत विभाजन' में लिखते हैं कि मुसलमान और उनके नेताओं ने कश्मीर में प्रतिनिधि सरकार की स्थापना के लिए प्रचंड आन्दोलन चलाया था। वहीं मुसलमान और उनके नेता अन्य मुस्लिम रियासतों में प्रतिनिधि सरकारों की व्यवस्था लागू किए जाने के घोर विरोधी हैं। इस विचित्र रवैये का कारण सीधा है। हर मामले में मुसलमानों के लिए निर्णायक प्रश्न यही है कि उससे हिन्दुओं की तुलना में मुसलमानों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। वे आगे लिखते है कि यदि प्रतिनिधि सरकार से मुसलमानों को सहायता मिलेगी तो वे उसकी माँग करेगें और उसके लिए संघर्ष भी करेगें। कश्मीर रियासत में शासक हिन्दू है किन्तु बहुसंख्यक जनता मुसलमान है। कश्मीर में मुसलमानों ने इसलिए संघर्ष किया जिससे सत्ता हिन्दू राजा से मुस्लिम आवाम के हाथों में आ जाए। अन्य मुस्लिम रियासतों में शासक मुसलमान है किन्तु बहुसंख्यक जनता हिन्दू है। ऐसी रियासतों में प्रतिनिधि सरकार का अर्थ होगा-राजनीतिक सत्ता का मुसलमान शासकों से खिसककर हिन्दुओं के हाथों में आ जाना। इसलिए मुसलमान एक स्थान पर तो प्रतिनिधि सरकार की माँग करते हैं और दूसरे स्थान पर उसका विरोध करते हैं। शेख अब्दुल्ला के इस तथाकथित आन्दोलन की बाबा साहेब ने बहुत ही पारदर्षी विश्लेषण किया है।[viii]

अत: बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर जम्मू-कश्मीर रियासत को अन्य रियासतों की तरह ही मानकर चलते थे और उसके लिए भारतीय सर्विधान ने अनुच्छेद 370 के प्रावधान के पक्ष में नहीं थे। किन्तु जम्मू-कश्मीर के अन्तिरम प्रधानमंत्री शेख अब्दुल्ला चाहते थे कि राज्य को खास तरीके का विशेष दर्जा दिए जाने का प्रावधान सर्विधान में किया जाए। अत: नेहरू की सलाह पर शेख अब्दुल्ला डॉ.आम्बेडकर से मिलने गए। तब डॉ.आम्बेडकर ने स्पष्ट शब्दों में शेख से कहा 'आप चाहते हो कि भारत आपकी सीमाओं की रक्षा करे, आपके क्षेत्र में सड़के बनवाए लेकिन आप यह भी चाहते हो कि कश्मीर का दर्जा भारत के समकक्ष हो। इतना ही नहीं, भारत सरकार का कश्मीर में पहुँच सीमित हो और भारत के अन्य नागरिकों के कश्मीर क्षेत्र में कोई अधिकार न हों। आपके इस प्रस्ताव पर सहमति देना देश के हितों के साथ विश्वासघात होगा।[ix] भारत के विधि मंत्री होने के नाते मैं यह कभी नहीं करूँगा। इस प्रकार जब डॉ.आम्बेडकर ने शेख के इस प्रस्ताव को सिरे से खारिज कर दिया तो अन्तत: जवाहर लाल नेहरू के विश्वसनीय गोपाल स्वामी आयंगर ने जम्मू-कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में अस्थायी अनुबन्ध 306 (1) जो बाद में अनुच्छेद 370 हुआ, को राज्य में युद्ध के कारण विशिष्ट परिस्थितियों को हवाला देकर सर्विधान सभा में पेश किया। जब इस अनुच्छेद पर सर्विधान सभा में बहस के दौरान सरदार पटेल और डॉ.आम्बेडकर खामोश बैठे रहे। इस प्रकार अनुच्छेद 370 जम्मू-कश्मीर राज्य के लिए एक अस्थायी व्यवस्था की गई थी, जिसका काम सर्विधान सभा के अभाव में जम्मू-कश्मीर में भारतीय सर्विधान को लागू करने की तात्कालीन एंव अन्तिरम व्यवस्था थी।[x]

कश्मीर के प्रश्न को लेकर बाबा साहेब की वेदना यहीं समाप्त नहीं होती। 10 अक्टूबर 1951 को केन्द्रीय मंत्रिमंडल से इस्तीफे के कारणों को लेकर उनका वक्तव्य नेहरू की कश्मीर नीति पर गहरे सवाल उठातें हैं। बाबा साहेब का मानना था कि यदि जवाहर नेहरू को यह लगता था कि जम्मू-कश्मीर का मसला सुरक्षा परिषद् में ले जाना बहुत जरूरी है तो भी यह मामला संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के छटें अध्याय की बजाय आठवें अध्याय के अन्तर्गत ले जाना चाहिए था। आँठवा अध्याय उन मामलों से सम्बन्धित है जब संयुक्त संघ का कोई एक देश दूसरे सदस्य देश पर आक्रमण कर देता है। जम्मू-कश्मीर के मामलें में भी पाकिस्तान ने भारत के एक हिस्से पर आक्रमण किया हुआ था। संयुक्त राष्ट्र संघ का छटा अध्याय संयुक्त राष्ट्र संघ के दो सदस्य देशों के बीच के किसी विवादग्रस्त मामले को शांतिपूर्ण तरीके की मध्यस्थता से सुलझाने से सम्बन्धित है। जम्मू-कश्मीर भारत और पाकिस्तान के बीच विवादग्रस्त मामला नहीं था बल्कि यह भारत स्वतन्त्रता की सवैधानिक व्यवस्था में शामिल हुआ था। अत: बाबा साहेब को इस बात का गहरा मलाल था कि 15 अगस्त 1947 को जब हमने आजाद देश में रूप अपनी यात्रा प्रारम्भ की थी तो सभी देशों की सद्भावना हमारे साथ थी। दुनिया का हर देश हमारा मित्र था। आज केवल चार साल में ही हमारे मित्र हमें छोड़ कर गए है। संयुक्त राष्ट्र संघ में हमारे प्रस्तावों का समर्थन करने वाला एक देश भी नहीं है। जम्मू-कश्मीर के मामले में भारत का पक्ष न्यायपूर्ण होते हुए भी दुनिया का कोई भी देश भारत के पक्ष में खड़ा नहीं हुआ। भारतीय विदेश नीति, जिसके जनक स्वंय नेहरू थे, अपनी विफलता का रोना सुरक्षा

परिषद् में रो रही थी।[11] वैसे तो सामान्य हालातों में महाराजा हरिसिंह द्वारा जम्मू-कश्मीर रियासत को देश की नई सांविधानिक व्यवस्था में शामिल किए जाने के बाद जम्मू-कश्मीर का प्रश्न खत्म हो जाना चाहिए था। किन्तु जवाहर लाल नेहरू की अदूरदर्शिता एवं हटधार्मिता के चलते डॉ.आम्बेडकर के मन में जम्मू-कश्मीर के भविष्य को लेकर खासकर वहाँ के हिन्दू-सिक्ख, बौद्ध गुज्जर, शिया इत्यादि को लेकर चिन्ता होने लगी थी। नेहरू जी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में जम्मू-कश्मीर के मसले को भेजकर उसे उलझा ही नहीं दिया था बल्कि देश में घूम-घूम कर घोषणा भी कर रहे थे कि जनमत संग्रह ही जम्मू-कश्मीर की समस्या का समाधान है और यदि जनमत संग्रह का परिणाम विपरीत गया तो जम्मू-कश्मीर भारत का अंग नहीं रहेगा। अत; 1951 के उस हालात में बाबा साहेब ने जम्मू-कश्मीर रियासत के विभाजन का सुझाव देकर अपनी यर्थाथ चिन्ताओं की अभिव्यक्ति की है। बाबा साहेब का मानना है कि 'जम्मू-कश्मीर में विवाद का मुख्य मुद्दा, कौन गलत है और कौन ठीक है इसी को लेकर है लेकिन मेरे विचार से मुख्य प्रश्नयह नहीं है कि कौन ठीक है मुख्य प्रश्न है कि क्या ठीक है तो मेरी राय में जम्मू-कश्मीर का विभाजन ही ठीक है। जैसे हमने हिन्दू और मुसलमान के आधार पर देश को ही बाँट दिया है, उसी के आधार पर हिन्दू-बौध हिस्से भारत में रहे और मुस्लिम हिस्से पाकिस्तान में चले जाएं। हमें कश्मीर के मुस्लिम हिस्से की चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यह कश्मीर के मुसलमानों एंव पाकिस्तान के बीच का मसला है। वे इस प्रश्न का जैसा भी निर्णय चाहे ले सकते हैं। यदि आपको ठीक लगता है तो पूरा क्षेत्र तीन हिस्सों में बाँटा जा सकता है। युद्ध विराम जोन, कश्मीर घाटी और जम्मू-लद्दाख जोन। इसमें भी अगर उनकी इच्छा हो तो जनमत संग्रह केवल कश्मीर घाटी में करवाया जाना चाहिए। मुझे सबसे ज्यादा चिन्ता इस बात की है कि प्रस्तावित जनमत संग्रह, जो समग्र जनमत संग्रह बन जाता है, में तो हिन्दुओं और बौद्धों को बिना उनकी इच्छा के बलपूर्वक पाकिस्तान में घकेल देना ही माना जा सकता है। इससे हमें कश्मीर में भी उन्हीं समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।, जो हम इतने अर्से से पूर्वी बंगाल में सामना कर रहे थे।[xi] वस्तुत: कश्मीर के विभाजन को लेकर बाबा साहेब की चिन्ताएँ एकाकी नहीं हैं। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी, मास्टर ताराचन्द, प्रेमनाथ डोगरा जैसे सरीखे राष्ट्रवादी नेता जम्मू-कश्मीर को लेकर चिन्तित थे। स्वंम भारत के गर्वनर जनरल लार्ड माउंटबेटन, किसी भी कीमत पर पाकिस्तान को देने का षडयंत्र रचते रहते थे। पूरा पंजाब और बंगाल पाकिस्तान में जाए, यही ब्रिटिश नीति थी। अत: पंजाब और बंगाल को पाकिस्तान में जाने से बचाने के लिए उसे विभाजित कराकर आधा-आधा प्रान्त भारत में रह सका, इसका श्रेय डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और प्रजाब में मास्टर ताराचन्द एवं उस समय पंजाब के नेतृत्व को जाता है। इस दृष्टि से जम्मू-कश्मीर के हालात भी बंगाल और पंजाब जैसे ही थे। इसी तर्ज पर बाबा साहेब भी हिन्दू एवं बौद्ध हिस्से भारत में बचा लेना चाहते थे। त्याग पत्र देने के कुछ दिन बाद ही नवम्बर 1951 में लखनऊ विश्वविद्यालय में छात्रों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा कि अगर हम सारा कश्मीर न ही बचा सकते तो कम से कम अपनी नस्ल के लोगों को तो बचाएँ। उसका इन्कार करने से नहीं चलेगा।[xii] इस प्रकार जम्मू-कश्मीर के प्रश्न को लेकर बाबा साहेब डॉ. भीमराव आम्बेडकर की चिन्ताएं एवं भूमिका कई सारे राष्ट्रीय प्रश्न लेकर खड़ा हैं, जिसका जवाब इतिहास का कोई भी वारिस आज आजादी के सात दशकों के पश्चात भी नहीं दे पा रहा है। जम्मू-कश्मीर की जीवन्त सच्चाईयाँ एवं पंडित जवाहर लाल नेहरू द्वारा लिए गए निर्णय, जिनके चलते कश्मीर की समस्या दिन-प्रतिदिन अत्याधिक जटिल होती चली गई। नेहरू जी का शेख अब्दुल्ला पर अत्याधिक विश्वास और उन्हें पंथ निरपेक्ष मानकर लिए गए निर्णय आत्मघाती सिद्व हुए। इतना ही नहीं, आजाद भारत में भी लार्ड माँउटबेटन के दबाव में लिए गए निर्णय जवाहर लाल नहेरू के नेतृत्व की काबिलियत पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं। नेहरू जी के माऊंटबेटन परिवार के साथ आत्मिक सम्बन्ध उनके व्यक्तित्व पर बहुत बड़ा दाग है। आधुनिक भारत के राष्ट्र निर्माता का व्यक्तिगत जीवन उसकी राजनीतिक प्रतिबद्धताओं से उपर हो सकता हैं, जिसका उल्लेख स्वंय माऊंटबेटन की बेटी पामेला माँउन्टबेटन ने अपनी पुस्तक में किया है, पंडित नेहरू से मेरी मां का विशेष रिश्ता पिताजी के लिए बहुत लाभदायक था। ऐसा समय भी आया जब कश्मीर बहुत ही समस्या मूलक हो गया था। जब कश्मीर का कोई पेंच होता तो सुबह नाश्ते के समय मां को कह देते थे कि नेहरू से बात कर लेना चिन्तनीय विषय यह है

कि पंडित नेहरू की विदेश नीति फ्लाप होने के बावजूद भारत का मीडिया एंव तथाकथित प्रबुद्ध वर्ग उन्हें आज भी आधुनिक भारत का निर्माता एवं शांति दूत कहते नहीं थकते। दूसरी ओर, बाबा साहेब डॉ. भीमराव आम्बेडकर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व कृतित्व पर परदा डालकर उन्हें सिर्फ भारतीय संविधान के निर्माता एवं दलितों के मसीहा तक सीमित कर दिया गया है। संक्षेप में, नेपोलियन बोना पार्ट की यह टिप्पणी कि इतिहास सदैव विजेताओं द्वारा लिखा जाता है। प्लेटो ने भी लिखा है कि कहानी सुनाने वालों के हाथों में सत्ता होती है। जम्मू-कश्मीर के मामले में पूरी तरह सटीक बैठता है।[xiii]

संदर्भ सूची

[i] Jawaid Alam (ED), Jammu and Kashmir 1949-64, Delhi, Penguin.

[ii] Ibid, p.p 145-146

[iii] Christopher Thomas, Faultline Kashmir, Middlesex UK, Brunol Academic Publishers, 2000 p. 144

[iv] चोपड़ा, पी.एन., सरदार पटेल: कश्मीर एंव हैदराबाद, प्रभात प्रकाशन, 2015, पृ. 23

[v] वही, पृ. 31

[vi] S.R. Sharma and S.R. Bakshi, Encyclopedia of Kashmir, Vol-7, Delhi Anmol Publications, 1996, pp-284-285.

[vii] धनंजय कीर, डॉ. बाबा साहेब आम्बेड़कर: जीवन चरित्र, पृ.-219

[viii] वही, पृ.

[ix] बलराज मधोक, कश्मीर जीत में हार, पृ. 100

[x] नरेन्द्र जाघव (सम्पा.) आम्बेड़कर राजनीति, धर्म और संविधान विचार, पृ. 195

[xi] वही., पृ. 195-196

[xii] धनंजय कीर, वही. पृ. 416

[xiii] Pamela Mountbatten, India Remembered p.18

**** Corresponding Author***

प्रो. बलवान गौतम

चन्दन आनन्द

शोध छात्र, डॉ. आम्बेडकर पीठ

हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला

Email.id-bs.20aug@gmail.com, *Mob-9971327848*